Shodhaamrit, Vol.-2; Issue-1 (Jan.-June) 2025 : Page No.-43-52

शोधामृत

(कला, मानविकी और सामाजिक विज्ञान की अर्धवार्षिक, सहकर्मी समीक्षित, मूल्यांकित शोध पत्रिका)

Online ISSN-3048-9296
IIFS Impact Factor-2.0
Vol.-2; issue-1 (Jan.-June) 2025
Page No- 43-52

©2025 Shodhaamrit (Online)
www.shodhaamrit.gyanvividha.com

डॉ. जयशंकर शुक्ल

प्रवक्ता (हिन्दी), विषय विशेषज्ञ,
कोर एकेडमिक यूनिट,
परीक्षा शाखा, शिक्षा विभाग,
शिक्षा निदेशालय, राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र, दिल्ली -110054.

Corresponding Author :

डॉ. जयशंकर शुक्ल

प्रवक्ता (हिन्दी), विषय विशेषज्ञ,
कोर एकेडमिक यूनिट,
परीक्षा शाखा, शिक्षा विभाग,
शिक्षा निदेशालय, राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र, दिल्ली -110054.

बौद्ध संस्कृति एवम् मानवीय चेतना के प्रारंभिक उपबंध

शोध सारांशिका : आज से लगभग ढाई शताब्दी पूर्व, जब भारतवर्ष में हर ओर वैदिक काल प्रचलित था, वैदिक शिक्षा को सर्वोच्च स्थान प्राप्त था, उसी समय में बौद्ध धर्म का जन्म हुआ, इस धर्म का प्रचार हुआ और दूर दूर तक प्रसार हुआ। यह बात हमें विचार करने के लिए प्रेरित करती है कि जिस काल में हिंदू धर्म की जड़ें इतनी पुरानी और गहरी थीं उसी काल में एक नया धर्म अस्तित्व में आया और इतना फैला कि आज भी बौद्ध धर्म को मानने वाले वर्ग अत्यंत विस्तृत है और बढ़ रहे हैं । ईसा पूर्व छठवीं शताब्दी में गौतम बुद्ध द्वारा बौद्ध धर्म का प्रवर्तन किया गया। गौतम बुद्ध के विचारों, शिक्षाओं को वैज्ञानिक इसलिए भी कहा जा सकता है क्यूँकि यह किसी भी काल में और किसी भी क्षेत्र के लोगों को मान्य हो सकता है । जैसे विज्ञान के सिद्धांत को किसी भी काल-क्षेत्र की मर्यादा में नहीं बांधा जा सकता उसी प्रकार भगवान बुद्ध द्वारा प्रारुपित चार आर्य सत्य को किसी जाति, काल, क्षेत्र आदि की मर्यादित सीमाओं में नहीं बाँधा जा सकता । ऐसे समय में गौतम बुद्ध ने आंतरिक यात्रा के पथ से चलते हुए अपने भीतर बुद्धत्व को प्रकट किया और 'धर्म' के उस सनातन स्वरुप का अनुभव एवं प्रस्फुटन किया, जो समय की गर्त में खो रहा था

बीज शब्द : जन्म, ज़रा, मृत्यु, चिंता, संताप, व्यग्रता, कष्ट, प्रिय का वियोग और अप्रिय का संयोग, सुख-दुख जीवन-मरण, यश-अपयश, मान्यता, स्वरूप का अज्ञान, अविद्या, साधक, सत्संग, सतगुरु के बोध,वस्तु, व्यक्ति, स्थिति, कर्म।

अध्ययन का उद्देश्य :

1. चिंतनशील अध्ययन के परिवर्तनकारी अनुभव को सभी के लिए प्रेरणा के रूप में प्रदर्शित करें, पाठक, समाज परिवर्तन की अपनी यात्रा स्वयं शुरु करें।

2. मध्यम मार्ग ज्ञान देने वाला है, शांति देने वाला है, निर्वाण देने वाला है, अतः कल्याणकारी है और जो कल्याणकारी है वही श्रेयस्कर है।
3. गौतम बुद्ध विश्वकल्याण के लिए मैत्री भावना पर बल देते हैं। ठीक वैसे ही जैसे महावीर स्वामी ने मित्रता के प्रसार की बात कही थी।
4. गौतम बुद्ध मानते हैं कि मैत्री के मोगरों की महक से ही संसार में सद्भाव का सौरभ फैल सकता है। वे कहते हैं कि बैर से बैर कभी नहीं मिटता। अबैर से मैत्री से ही बैर मिटता है।
5. मित्रता ही सनातन नियम है ।
6. बहुत संस्कृति अपने आप में भारतीय और भारतीयता को समाए हुए हैं यह निश्चित तौर पर मानवीय संवेदनाओं और लक्ष्यों के मध्य में संबंध में रखते हुए मध्यम मार्ग का प्रतिपादन करते आगे बढ़ती है इसने मानव मात्र के लिए कल्याण का मार्ग उसके इसी जीवन में प्रशस्त किया है।

तर्क : प्रस्तुत शोध पत्र में महात्मा बुद्ध के उन्ही चार आर्य सत्य एवं उन्ही आर्य सत्यों से प्रेरित अष्टांगिक मार्गों का सामजिक प्रभाव एवं ग्राह्यता पर प्रकाश डालते हुए , इसका समीक्षात्मक अध्ययन प्रस्तुत किया गया है, जिसके माध्यम से महात्मा बुद्ध की प्रमुख शिक्षाओं में से एक चार आर्य सत्यों का सरलीकरण एवं इनके उद्देश्य प्रस्फुटित हो सकें |

अनुसंधान क्रियाविधि :

नमूना: नीति दस्तावेज़ और दिशानिर्देश

उपकरण: गुणात्मक दस्तावेज़ विश्लेषण

डिज़ाइन: वर्णनात्मक साहित्य समीक्षा

अध्ययन : मुख्य रूप से निष्कर्षों के लिए फॉर्म दस्तावेज़ों में पहले से मौजूद डेटा का उपयोग करता है/आशय।

प्राथमिक स्त्रोत :

पालि एवं संस्कृत आधार ग्रंथ।

अनुवाद एवं मूल हिंदी साहित्य।

प्रस्तावना :- गौतम बुद्ध का जन्म 563 ईसा पूर्व में लुम्बिनी (वर्तमान नेपाल में) में में हुआ, उन्हें बोध गया में ज्ञान की प्राप्ति हुई, बुद्ध की ज्ञान प्राप्ति के 49 दिनों के बाद उनसे पढ़ाने के लिए अनुरोध किया गया । इस अनुरोध के परिणामस्वरूप, योग से उठने के बाद गौतम बुद्ध ने बोधि प्राप्ति के पश्चात अपने अमूल्य शिक्षाओं के सार के रूप में चार आर्य सत्यों को व्यक्त किया । इन शिक्षणों में चार मूल विचारों के साथ, अन्य प्रवचन सूत्र भी शामिल थे, जो हीनयान और महायान के प्रमुख श्रोत थे। गौतम बुद्ध द्वारा उद्घघाटित इन्ही चार मूल शिक्षाओं को 'आर्य सत्य' के नाम से जाना जाता है। प्रथम अर्थ में यहाँ आर्य का अर्थ 'श्रेष्ठ' है, अर्थात् बुद्ध के इन्ही चार सिद्धांतों को जीवन का 'श्रेष्ठ सत्य' माना गया वहीं द्वितीय अर्थ में यह भी माना जाता है कि ये 'सत्य' आर्य अर्थात श्रेष्ठ (गौतम बुद्ध) पुरुष द्वारा उपदिष्ट हैं इसीलिए इसे आर्य सत्य कहा गया।[1]

अन्य विचारों के सम्यक बौद्ध-काल में 'आर्य' शब्द किसी जाति को संबोधित नहीं करते हुए शालीनता और सभ्यता के प्रतीक थे और इसीलिए भगवान बुद्ध के प्रमुख सूत्रों को चार ' आर्य सत्य ' के नाम से प्रसिद्धि मिली।

परिचय : भारत एक बहु-धार्मिक, बहु-दार्शनिक देश है। वैदिक काल के स्त्रोतों के अध्ययन से पता चलता है कि देश में पाए जाने वाले दर्शन की उत्पत्ति 1750 ईसा पूर्व की है। सबसे अधिक भारतीय दर्शन के महत्वपूर्ण काल का पता 1000 ईसा पूर्व से लगाया जा सकता है। इस अवधि के दौरान भारत में चार्वाक दर्शन, जैन दर्शन और बौद्ध दर्शन ने आकार लिया। छठी शताब्दी के भारत के दर्शन में, मुख्य रूप से जैन और बौद्ध दर्शन प्रमुखता प्राप्त करने लगे।[2] इनमें से बौद्ध दर्शन सामने आया और यह दर्शन इतना शक्तिशाली था कि बाद में यह भारत के सभी भागों में फैल गया। बौद्ध दर्शन में स्वतंत्रता और अहिंसा प्रमुख कारण थे। बौद्ध धर्म की शिक्षाएं इसके अपने अनुयायियों के लिए बहुत ही आवश्यक थी जिसे गौतम बुद्ध ने अपने जीवन काल में ही सुनिश्चित कर दिया था।

बौद्ध दर्शन की मुख्य शिक्षाएँ :

जिन चार मुख्य बिंदुओं पर बौद्ध दर्शन की मुख्य शिक्षाएँ आधारित हैं उन्हें हम आर्य सत्य के नाम से जानते हैं,जो निम्नलिखित हैं :-

1. दुक्खा - भगवान बुद्ध ने अपने जीवन के प्रत्यक्ष बहाव और व्यक्तिगत अनुभव के आधार पर प्रथम आर्य सत्य की उद्घोषणा यह की कि यदि हम जीवन के बाह्य स्वरूप में उलझे हुए हैं तो वहाँ मात्र दुःख ही है। जन्म, ज़रा, मृत्यु, चिंता, संताप, व्यग्रता, कष्ट, प्रिय का वियोग और अप्रिय का संयोग — ये सभी दुःख के प्रकार हैं। चाहे ढाई हज़ार वर्ष पहले का समय हो या अभी, परंतु इन सभी मनःस्थितियों से मनुष्य तब भी जूझ रहा था और आज भी इनसे दूर रहने की हर नाकाम कोशिश कर रहा है। भगवान बुद्ध के बताए मार्ग पर चलने के लिए प्रथम निर्णय अनिवार्य है कि जीवन में दुःख है और हमारी सभी कोशिशें वर्तमान और भविष्य में दुःख से दूर रहने की ही हैं।[3]

2. समुदाय - यहीं से भगवान बुद्ध के विज्ञान पूर्ण बोध का आरम्भ होता है। यदि जीवन में दुःख का प्रत्यक्ष अनुभव है तो अवश्य ही इस दुःख का कोई कारण भी होना चाहिए। और यहीं से भगवान बुद्ध के दूसरे आर्य सत्य को मानने वाले लोगों का दो प्रमुख वादों में विभाजन हो जाता है। जो मनुष्य दुःख का कारण स्वयं के बाहर मानते हैं यानि वस्तु, व्यक्ति, स्थिति, कर्म आदि को दुःख का कारण मानते हैं वे सभी मनुष्य अभी संसारी ही हैं परंतु जो इस दुःख का कारण स्वयं के भीतर मानते हैं जैसे कि स्वयं की मान्यता, स्वरूप का अज्ञान, अविद्या आदि — तो वे सभी मनुष्य 'साधक' हैं। मनुष्य को वर्षों के सत्संग और सतगुरु के बोध के पश्चात् यह निश्चय हो पाता है कि दुःख का कारण बाहर नहीं, स्वयं के भीतर है। जब तक मनुष्य को यह निश्चय नहीं होता तब तक दुःख-निवृत्ति के सभी प्रयास निष्फल ही रहते हैं।[4]

3. निरोध - दुःख के कारण का यथार्थ निर्णय हो जाने के पश्चात् अब साधक आगे की यात्रा में प्रवेश करता है जहाँ किसी सद्गुरु से मिलने पर उसे दृढ़ निर्णय होता है कि दुःख के आंतरिक कारणों का निवारण किया जा सकता है। यदि यह विश्वास ही न हो तो साधक द्वारा की हुई सभी साधना व्यर्थ है। इसलिए भगवान बुद्ध ने तीसरे आर्य सत्य में 'श्रद्धा' को प्रधान स्थान दिया। साधक में जब तक मार्गदर्शक और मार्ग के प्रति सम्पूर्ण निष्ठा नहीं आती तब तक दुःख से निवृत्ति संभाव नहीं है।

4. मग्गा - चौथा और अंतिम सत्य दुख की समाप्ति का मार्ग (मग्गा) है , जिसका वर्णन बुद्ध ने अपने पहले उपदेश में किया था। चार सत्य अस्तित्व की असंतोषजनक प्रकृति की पहचान करते हैं, इसके कारण की पहचान करते हैं, एक ऐसी स्थिति का निर्धारण करते हैं जिसमें दुख और उसके कारण अनुपस्थित होते हैं, और उस स्थिति के लिए एक मार्ग निर्धारित करते हैं।[5]

उपरोक्त ,चार आर्य सत्य बौद्ध धर्म से संबंधित हैं और इन्ही चार आर्य सत्यों को बौद्ध धर्म का सार कहा जा सकता है। जब राजकुमार सिद्धार्थ ने चार संकेतों को देखा तो उन्होंने अपने सभी सांसारिक सुखों के परित्याग का फैसला किया। अपने ज्ञानोदय में शामिल होने के बाद उन्होंने इन 4 तरीकों को एक बौद्ध के लिए चार आर्य सत्य के रुप में सिखाया। वे हैं दुख का सत्य, दुख के कारण का सत्य, दुख के अंत का सत्य और दुख के अंत की ओर ले जाने वाले मार्ग का सत्य।[6]

यहाँ पहला बिंदु दुःख की पहचान की ओर इशारा करता है। उदाहरण के लिए, एक व्यक्ति जो कम उम्र में बहुत मजबूत और सुंदर है, समय के साथ उसकी उम्र और वजन कम हो जाएगा। और शरीर को प्रभावित करने वाले रोगों को हम कभी भी नियंत्रित नहीं कर सकते। उदाहरण के लिए, कैंसर का विकास हमारे नियंत्रण से बाहर है। बुद्ध ऐसी चीजों को जीवन के वास्तविक दुख के रुप में समझते हैं। बौद्ध धर्म में दुनिया के सभी आम लोग जन्म से लेकर मृत जीवन तक इस सच्चाई का सामना कर रहे हैं।

बौद्ध दर्शन में पीड़ा के कुछ सामान्य कारण :

1. जन्म- बौद्ध दर्शन में पीड़ा के सामान्य कारणों के विश्लेषण में हम देखते हैं कि जन्म को पहले स्थान पर

रखा गया है। अर्थात व्यक्ति के अस्तित्व के साथ ही उसकी पीड़ा के क्रम शुरु हो जाते हैं। बौद्ध दर्शन में इस बात पर विशेष बल दिया गया है कि जन्म के साथ ही साथ हमें अपने आसपास के समस्त उपादानों से स्वयं को सुरक्षित रखने हेतु एक निश्चित क्रियाकलाप करना होता है जिसके माध्यम से हम स्वयं को पीणा के प्रारंभिक उपादान से बचाने में सफल हो सकते हैं।

2. बीमारी- मनुष्य की बीमारी उसे निरंतर अपने जीवन के सामान्य एवं विशिष्ट क्रियाकलाप को संपादित करने में अवरोध उत्पन्न करती है। और यह पीड़ा का एक मुख्य कारण होती है, जो हमें शारीरिक कष्ट से लेकर के मन मस्तिष्क को आंदोलित करती है जहां पर व्यक्ति कष्ट और पीड़ा से अवसाद युक्त होकर के जीवन के मुख्य लक्ष्य को भूल कर के बिखर जाने को विवश हो जाता है।

3. बुढ़ापा- बुढ़ापे में हमारे समस्त अंग शिथिल होने शुरु हो जाते हैं। और हम एक भी कदम आगे बढ़ाने से स्वयं को असमर्थ पाते हैं। शक्तहीनता और अधीर होना दोनों समानांतर कार्य करते हैं, जिसके कारण एक व्यक्ति अपने जीवन में असहज होता हुआ शक्तहीनता के कारण लाचारी और असफलता का अनुभव करता है। यह ऐसी अनुभूतियां है, जिससे कि वह अपने जीवन के क्रियाकलापों को पूरा नहीं कर पाता और पीड़ा के महान गर्भ में समा जाता है। बौद्ध दर्शन में बुढ़ापा को पीड़ा का एक बड़ा कारण माना गया है, जो हर व्यक्ति के जीवन में आना ही होता है । इसका किसी भी तरह का कोई समाधान नहीं है।

4. मृत्यु का भय- मानवीय चेतना के प्रारंभिक उपबंधों को ध्यान से देखने पर सिद्धार्थ गौतम बुद्ध ने अपने अनुभूतियों को जिन शब्दों में व्यक्त किया वहां पर समस्त कारक हमारे जन्म के साथ ही शुरु होते हैं और मृत्यु के साथ समाप्त। इसलिए जन्म एवं मृत्यु को विशेष माना गया है। और यही से हमारी पीड़ा हमारे साथ निरंतर गतिमान हो करके हमें हमारे अनुभव शक्तियों से संपृक्त करती है।

5. प्रियजन से विछोह का भय - हमारे जन्म के साथ ही हमारे रिश्ते बनने शुरु हो जाते हैं । यहां हमारे माता-पिता, भाई-बहन, चाचा-चाची, ताया-ताई, दादा-दादी, नाना-नानी, मामा-मामी जैसे अनेकानेक रिश्ते बनते हैं। इन रिश्तो से हम किसी न किसी रूप से जुड़ते हैं। भावनात्मक एवं आत्मिक रूप से यह लगाव हमें बांधता है । और यह बंधन हमें उनसे अलग नहीं होने देता । उनके अभाव को हम बहुत बड़े पीड़ा और कष्ट के रूप में लेते हैं। और अपने जीवन में उस से असहज हो जाते हैं। यह असहजता हमें हमारे लक्ष्य को प्राप्त करने से भी रोकती है।

6. किसी अप्रिय वस्तु या स्थिति के साथ सह्चार्यता की बाध्यता - मनुष्य जीवन में उसके उत्पत्ति से लेकर के उसके प्रिय एवं अप्रिय दो तरह के लोगों की श्रेणी बननी शुरु हो जाती है। इस श्रेणी में जो उसके प्रिय हैं उनके साथ वह जुड़ा रहना चाहता है तथा जो अप्रिय हैं , उनके सानिध्य से वह अपने को बचाना चाहता है। वस्तु, व्यक्ति हो अथवा स्थिति हो इनसे साहचर्यता मनुष्य को कष्ट पहुंचाती है। और यह कष्ट उसके जीवन को सुख नहीं लेने देती। और यहां उसका अपना जीवन लक्ष्य प्रभावित होता है, जिसके लिए कि वह योग्य है । यहां यह साहचर्यता जो कि उसे अपनी वस्तु के साथ ही जोड़ती है, उसके पीड़ा और कष्ट करें बड़ा कारण बनती है।

उपरोक्त कष्ट बुढ़ापा, बीमारी, मृत्यु से जुड़े हैं। साथ ही यही चीजें हैं जो सिद्धार्थ को अपने महल से बाहर निकलने का कारण बनती हैं । बुद्ध बताते हैं कि वृद्धावस्था, बीमारी और मृत्यु के साथ जन्म लेने वाले व्यक्ति के लिए सबसे अच्छा उपाय है कि जन्म देना बंद कर दिया जाए । अर्थात् दुःख का कारण जन्म है। तीसरा, बुद्ध दुख के कारण को समाप्त करने की आवश्यकता की ओर इशारा करते हैं, अर्थात् बुद्ध बताते हैं कि केवल पुनर्जन्म और मृत्यु को समाप्त करना आवश्यक है।[7]

उपरोक्त शिक्षाओं में "निर्वाण" की चर्चा है, और इसी शिक्षा के साथ, बौद्ध धर्म में 12 अन्य शिक्षाओं का उल्लेख है जो इस प्रक्रिया "निर्वाण" में बाधा डालती हैं और वे इस प्रकार हैं।

बौद्ध धर्म में 12 अन्य शिक्षाएं :

1. अविज्ज - (अज्ञान) : बौद्ध धर्म की पहली शिक्षा जो गौतम बुद्ध द्वारा निर्दिष्ट की गई अपने जीवन काल में प्राप्त अनुभूतियों के द्वारा वह है अविद्या अथवा अज्ञान। व्यक्ति अपने जीवन में घटने वाली घटनाओं और उनके कारणों से पृथक रहने के कारण उनकी पहचान न करने के कारण पीड़ा और कष्ट में पड़ा रहता है, जिसके कारण व जीवन लक्ष्य को प्राप्त करने में अपने को असमर्थ पाता है । उसकी असफलता उसके जीवन में उसे सत्य और ज्ञान से दूर करती है या ज्ञान अतः उसे रुकती है।

2. शंकर - शरीर, वाणी और मन से कोई भी क्रिया : बौद्ध दर्शन के अनुसार व्यक्ति के द्वारा उसके शरीर वाणी अथवा मन के द्वारा होने वाली क्रिया है। उसको उसके संस्कारों से उसके द्वारा की गई क्रियाओं के परिणामों से बांधती हैं। यह बंधन व्यक्ति को निरंतर आगे बढ़ने में उसको रोकती हैं । और यह रुकावट उसके द्वारा लक्ष्य प्राप्ति से उसे अलग करती हैं। यह अलगाव निश्चित तौर पर व्यक्ति को अपने जीवन में मन वाणी अथवा कर्म के द्वारा जो कुछ भी किया जा रहा है, उसपर नजदीकी दृष्टि द्वारा देखने परखने और उनसे बचने की क्रिया को अपनाने की बात कही जाती है।[8]

3. विन्नाना - कामुक चेतना : गौतम बुद्ध ने अपने जीवन काल में ही प्राप्त ज्ञान के आधार पर यह निष्कर्ष निकाला कि व्यक्ति के द्वारा उसके अपने जीवन में लक्ष्य प्राप्ति से असफल रहने का एक बड़ा कारण है कामुक चेतना व में उसका संयुक्त होना । यह संलिप्तता व्यक्ति को उसके उद्देश्य से पृथक करती है। और उसको पीछे की तरफ ले जाती है। इससे बचकर ही व्यक्ति अपने निर्दिष्ट लक्ष्य को प्राप्त कर सकता है। और उसके लिए मार्ग प्रशस्त करने में यह सहायक होगी। विन नाना को पहचानना अर्थात का मुख्य तनाव की पहचान करना और उनको अपने जीवन से अलग करने की क्रिया को समझ लेना ही व्यक्ति को उसे पूर्ण करने में सहायक होती है यह गौतम बुद्ध की प्रमुख शिक्षा के रुप में मानी जाती है।[9]

4. नामरुप - नाम और शरीर : जन्म लेने के उपरांत हर व्यक्ति की पहचान उसका नाम होता है। जो उसके माता-पिता द्वारा दिया जाता है। यह नाम उसके रूप के साथ जुड़ जाता है । और नाम और रूप का यह चुनाव व्यक्ति को जानकर समझकर पहचान कर उसका विश्लेषण करके अपने जीवन में उसे समझना होता है। जब वह उस ग्रुप के साथ उस नाम के विश्लेषण को जान करके अपने आपको तैयार करता है। तो वह निश्चित तौर पर अपने प्रगति के पथ पर आगे बढ़ने की ओर स्वयं को अग्रेषित पाता है। गौतम बुद्ध ने इसे विशेष रुप से कहा है कि नाम और रूप का विश्लेषण एक व्यक्ति के लिए अत्यंत आवश्यक है।

5. सलयाथन - आँख, कान, नाक, स्पर्श, तन और मन ये 6 माध्यम : मानव जीवन में बाहरी दुनिया को जानने और समझने के लिए उसकी ज्ञानेंद्रियां प्रमुख होती हैं। नाक कान जिह्वा त्वचा आंख जैसी ज्ञानेंद्रियों के द्वारा ही व्यक्ति बाहर की दुनिया से स्वयं को जोड़ पाता है। इसमें उसका मन और उसका तन भी प्रमुख होता है। इसके द्वारा गौतम बुद्ध ने इस चीज को सुनिश्चित किया है, कि हम बाहरी दुनिया के चीजों को समझ कर के उसके अनुरुप स्वयं को ढालें और इसके साथ ही साथ अपने स्वयं के जीवन से शिक्षित होते हुए प्रगति के पथ पर आगे बढ़ने की नरेंद्र कोशिश करते रहे। गौतम बुद्ध की प्रमुख शिक्षाओं में वह दुनिया से स्वयं को जोड़ना और उसके अनुसार अपने कर्तव्य का निर्धारण करना और लक्ष्य की प्राप्ति हेतु निरंतर आगे को पढ़ना प्रमुख माना गया है।[10]

6. पासा - संपर्क : व्यक्ति के जीवन उसका संपर्क अत्यंत महत्वपूर्ण होता है। जिस तरह के लोगों के संपर्क में हम होते हैं। हमारी भी धारणा और ध्यान उसी तरह के लोगों पर बनी रहती है। विचार भाव एवं कर्म हमारे हमारे से जुड़े हुए लोगों के साथ जुड़ता है, मिलता है और उसी के अनुसार हमारे आगे के मार्ग सुनिश्चित होते हैं। जब इन मार्गों की तरफ में आगे बढ़ने के लिए स्वयं का मूल्यांकन करना होता है। तो हम देखते हैं कि हमारे लक्ष्य की प्राप्ति की और हमारे संबंध में कितने अग्रसारित कर रहे हैं। यदि नहीं कर रहे हैं तो हमें इस पर ध्यान देते हुए स्वयं को नियंत्रित

निर्देशित एवं सुपोषित करना होता है।[11]

7. वेदना - भावना : मानव जीवन में वेदना का प्रमुख स्थान होता है। व्यक्ति स्वभाव से संवेदनशील होता है । उसकी संवेदना ही उसकी भावनाओं के रूप में प्रकट होती हैं। किसी के दुख देख करके दुखी होना और सुख में सुखी होना मानव का सामान्य स्वभाव है । जब इसको लेकर के गौतम बुद्ध की शिक्षाओं की ओर हम ध्यान करते हैं तो निश्चित रूप से हमें यह ध्यान देना होता है कि व्यक्ति की भावना या वेदना उसको समझने का गुण हमारे अंदर विकसित हो जिसके कारण हम किसी भी व्यक्ति के स्वभाव को समझ सके और स्वयं को उसके अनुसार आगे बढ़ने की ओर प्रेरित कर सकें।[12]

8. थान्हा - नक्काशी या प्यास जो छह माध्यम कमा रहे थे : हमारे शरीर में हमारी अनुभूतियों के छह मार्ग बताए गए हैं। वह हमारे पांच ज्ञानेंद्रियां और एक मन है, जिसके द्वारा हम जीवन में घटने वाली घटनाओं और सुख दुख जीवन मरण यश अपयश ऐसी चीजों को समझ पाते हैं । और उनको अनुभव कर पाते हैं। इन अनुभूतियों को करते हुए हमें स्वयं को सुनिश्चित करना होता है । और अपने स्वयं के भावों की तरह विकसित करनी होती है । जो हमारे अपने लक्ष्य प्राप्ति में हमारे सहायक होते हैं। गौतम बुद्ध की शिक्षाओं में यह प्रमुख स्थान पर है। जहां पर कि हम अपने द्वारा अनुभव किए गए भावों विचारों को विश्लेषण निश्चित करके उनके द्वारा स्वयं के मार्ग को निर्धारित करने की ओर आगे बढ़ सके।[13]

9. उपदान - इसका अर्थ है "लगाव" : लगाव गौतम बुद्ध के द्वारा सुनिश्चित की गई शिक्षाओं में एक महत्वपूर्ण स्थान पर है । जब हमें किसी से लगाव होता है, तभी हमें सुख अथवा दुख की अनुभूति होती है। लगाव में, जिससे लगाव है उसके द्वारा आह्लाद एवं प्रसन्नता के समय हमें सुख की अनुभूति होती है। और उसके कष्ट में हम दुखी होते हैं। इन दोनों से बचने के लिए लगाव कि स्थिति में स्वयं को समदर्शी रखते हुए अलग करके देखना होता है। जिससे कि हम जीवन में अपने लक्ष्य की प्राप्ति की ओर बढ़ते हुए इस तरह के लगाव से स्वयं को बचा सके।

10. भाव - तृष्णा और आलिंगन की सेवा करने वाला व्यवहार : मानव जीवन में तृष्णा, आलिंगन से बचाव की सबसे बड़ी शक्ति होती है। मानव के द्वारा प्रश्न और आलिंगन अर्थात सुखी अवस्था हो या दुख की अवस्था दोनों का समय रूप से सेवा करने वाला भाव होना चाहिए , जो उसे निरंतर उसकी अपनी स्वीकार्यता में वृद्धि करती है । बौद्ध धर्म की शिक्षाओं में समरूपता का यह सुगम मार्ग बहुत ही सहज है। जिसके द्वारा कि एक व्यक्ति अपने जीवन काल में आलिंगन और तृष्णा दोनों में समभाव रखते हुए जीवन के विभिन्न पक्षों का अनुभव अपने स्वयं के बनाए नियमों के अनुसार करता है। और शिक्षा की इस परंपरा के आधार पर स्वयं के लक्ष्य को निर्धारित कर प्राप्त करता है।[14]

11. जाति - जन्म : बौद्ध धर्म की शिक्षाओं के क्रम में जन्म के साथ ही साथ उसकी जाति की सुनिश्चित बताई जाती है । जब हम जन्म और जानकी सुनिश्चित आ की तरफ ध्यान देते हैं, तो सहजे उद्घाटित होता है कि व्यक्ति के अपने जीवन काल में उसे एक नाम से जाना जाता है। उसके कुल से जाना जाता है । उसके अपनी परंपराओं से जाना जाता है। बौद्ध धर्म की शिक्षाएं व्यक्ति को इन सब से अलग रखते हुए उनके अपने स्व की पहचान की और उन्हें प्रेरित करती हैं । जिससे कि वह अपने जीवन में एक निश्चित धारणा को लेकर आगे चलते हुए स्वयं के द्वारा निर्देशित उद्देश्यों की प्राप्ति को सुनिश्चित कर सकें।[15]

12. जरामाराना - बुढ़ापा और मृत्यु : बौद्ध धर्म की शिक्षाओं के अंतिम पड़ाव पर बुढ़ापा और मृत्यु को रखा गया है। जहां कि व्यक्ति अशक्त हो जाता है, उसकी ताकत क्षीण हो जाती है और और जीवन में अपने द्वारा निश्चित कृतियों को कर पाने में असफल होता है। यह असक्तता उसके अपने जीवन में हासिल किए गए उसके द्वारा अर्जित शक्तियों से से परिचित होने में अवरोध उत्पन्न करती है। जिसके फलस्वरूप वह अपने लक्ष्य प्राप्ति में असफल हो जाता है और कष्ट के सरोवर में डूब कर के अपनी लीला समाप्त करता हुआ सा प्रतीत होता है।

गौतम बुद्ध के अनुसार यदि कोई व्यक्ति इन 12 बातों का त्याग करने को प्रतिबद्ध है तो वह भाग्यशाली है और वह "निर्वाण" प्राप्त करेगा और गौतम बुद्ध का चौथा उपदेश उसे "निर्वाण " प्राप्त करने का रास्ता दिखाता है। इसे आमतौर पर बौद्ध धर्म में अष्टांग मार्ग के रूप में नामित किया गया है।[16]

भगवान बुद्ध द्वारा उपदेशित अष्टांग मार्ग ही आगे चल कर धर्म-चक्र के नाम से प्रसिद्ध हुआ। यह अष्टांग मार्ग मनुष्य को सही-ग़लत का निर्णय कर के सम्यक् मार्ग का चुनाव करने का उपदेश देता है। बुद्ध के सम्पूर्ण मार्ग में कहीं भी किसी भी क्रिया-कांड का आग्रह नहीं है। परंतु सम्यक् विचारणा की ही प्रमुखता है। चूँकि विचारों की सत्ता, शारीरिक कर्म की सत्ता से कहीं अधिक सूक्ष्म है।

इसलिए बुद्ध के बताए मार्ग पर चलने से सूक्ष्म स्तर पर हेरफेर होता है जो साधक के जीवन को शाश्वत आंतरिक दशा एवं दिशा प्रदान करता है। किसी भी क्षेत्र और काल में जब सम्यक् संबुद्ध चेतना पर श्रद्धा की दृढ़ भूमिका बनती है तो वहीं से निर्वाण के मार्ग का शुभारम्भ होता है। भगवान बुद्ध के समय में इसे 'अष्टांग मार्ग' के नाम से जाना गया और इस मार्ग को बुद्ध के 'त्रिरत्न' के नाम से भी पहचाना जाता है और प्रज्ञा, शील, ध्यान के इन्हीं त्रिरात्नों के विस्तार को अष्टांग मार्ग कहते है।[17]

यह अष्टांग मार्ग मनुष्य को दोनों प्रकार की अति की दिशा में बढ़ने के लिए सावधान करता है इसलिए इसे 'मध्यम-मार्ग' भी कहा जाता है। गौतम बुद्ध द्वारा उपदेशित अष्टांग मार्ग निम्लिखित हैं-

बुद्ध द्वारा उपदेशित अष्टांग मार्ग :

1. सम्यक दृष्टि (सही दृष्टि)- अष्टांग मार्ग में सबसे प्रथम है मानव की दृष्टि सम्यक होनी चाहिए । अर्थात उसके द्वारा हर चीज में पारदर्शिता होनी चाहिए एकरूपता होनी चाहिए। सहजता होनी चाहिए और कहीं पर भी पक्षपात नहीं होना चाहिए। सम्यक दृष्टि होने पर एक व्यक्ति साधना के प्रथम चरण को प्राप्त कर अष्टांग योग के पहली सीढ़ी पर अपने कदम सफलतापूर्वक रख देता है। लक्ष्य प्राप्ति की ओर बढ़ते हुए यह प्रथम कदम उसे आगे बढ़ने में निरंतर सहयोग प्रदान करते हैं।

2. सम्यक संकप्पा (सही सोच)- मानव जीवन में दृष्टि किस समय होने के साथ-साथ से संकल्प भी सब मेक्रम सधे हुए होने चाहिए सम्यक संकल्पा व्यक्ति को निरंतर आगे पढ़ने में उसकी मदद करते हैं। और इस तरह से वह व्यक्ति अपने जीवन में अपने विकास को लेकर के कृत संकल्प होते हुए अष्टांग मार्ग के द्वितीय सोपान को सफलतापूर्वक प्राप्त कर लक्ष्य की ओर मजबूती से कदम बढ़ाता है। सम्यक संकल्पा से युक्त व्यक्ति अपने जीवन में पारदर्शिता और निष्पक्षता लाते हुए आगे की ओर बढ़ने की ओर निरंतर अग्रसर होता है।

3. सम्यक वाक् (सही शब्द)-मानव जीवन में मानव के बोलने के क्रम को भी नहीं करना बहुत सही होता है और उद्देश्य पूर्ण होता है जब हम बोलने में समानता और एकरुपता का ध्यान रखते हैं। किसी को अप्रिय वाणी नहीं बोलते सब के प्रति समान भाव से व्यवहार करते हैं तो यह निश्चित रूप से हमारे लक्ष्य की और हमें बढ़ाने में बहुत मदद करता है। वाणी का सही प्रयोग व्यक्ति को निश्चित मार्ग पर प्रशस्त करता है। जब भी किसी व्यक्ति की वाणी उसे निश्चित मार्ग पर आगे बढ़ने में सहायक होती है तो उसके व्यवहार परिष्कृत होते चले जाते हैं।

4. सम्यक कमंथा (सही काम)- व्यक्ति का काम मतलब आजीविका के लिए किसी न किसी माध्यम को अपनाना एवं आजीविका के लिए सही मार्ग का अनुसरण करते हैं तो निश्चित रूप से हमारा कार्य हमारा व्यवहार हमारा बर्ताव हमारा सकारात्मक रूप से हमारे समीप और हमारे लिए अच्छा होता है। गौतम बुद्ध के अनुसार सही तरह से कार्य करना व्यक्ति के व्यक्तित्व के एवं चारित्रिक विकास के लिए अत्यंत आवश्यक होता है । यह मानव को सकारात्मक एवं उद्देश्य केंद्रित रखता है।

5. सम्यक अगिवा (सही आजीविका)- आजीविका का अर्थ है अपने उधर पोषण एवं परिवार के पालन के लिए किसी न किसी माध्यम को अपनाना। जितना

सही श्रम साध्य एवं पवित्र होगा व्यक्ति का जीवन उतरा ही पात्र समझाते हो उचित होता चला जाएगा यह मानवीय संचेतना को नए मार्ग की ओर आगे बढ़ने में सहायक होती है। मनुष्य की आजीविका उसके व्यवहार कार्य एवं बर्ताव को सुनिश्चित करती है उसके ऑफिस में चुनाव एवं उसके दृष्टिकोण को पोषित पुष्पित एवं पल्लवित होने में मदद करती है।

6. सम्यक वायमा (सही प्रयास)- हर व्यक्ति जीवन के निर्धारण एवं जीवन के संचालन के लिए एक निश्चित रुप से अपने लिए प्रयत्न करता है । और यह प्रयत्न व्यक्ति के मार्ग को पुष्ट करता है घोषित करता है। एवं आगे बढ़ने में उसकी मदद करता है। प्रयास व्यक्ति को उसके कार्यों में शुचिता का समर्थक होता है गलतियों से उसे बचाता है एवं उद्देश्य केंद्रित बने रहने के लिए उसका समर्थन करता है। गौतम बुद्ध ने प्रयत्न को बहुत महत्वपूर्ण माना है उनके अनुसार प्रयत्न जितना सार्थक एवं सकारात्मक होता है व्यक्ति उतना ही आगे जरूर पढ़ने और लक्ष्य की प्राप्ति में सतर्क रहने की ओर अग्रसर रहता है।

7. सम्यक साथी (सही दिमागीपन)- मानव के निर्णय लेने की प्रक्रिया में उसका मस्तिष्क उसका साथी होता है निर्णय लेने के समय व्यक्ति की दो चीजें उसके सामने होती है। एक दिल एक दिमाग यह दिल की सुनता है तो दिमाग उसे वहां पर निश्चित और नियंत्रित नहीं कर पाता , जबकि नियंत्रण हमारे कार्यों में अत्यंत आवश्यक है। क्या सही है? क्या गलत है? किसे हमें करना चाहिए ? क्या नहीं करना चाहिए? इसका निर्धारण केवल दिमाग ही कर सकता है। और यह सम्यक होना चाहिए था सदा हुआ होना चाहिए।

8. सम्यक समाधि (सही एकाग्रता)- व्यक्ति की एकाग्रता उसके पवित्रता एवं साधन के परिपक्वता पर निर्भर करता है। यह व्यक्ति अपने मार्ग का निर्धारण अपने विचार भाव और निर्देशित शिक्षाओं के आधार पर करता है, तो उसे लक्ष्य प्राप्त करना उसके लिए बहुत ही सहज और सरल हो जाता है। एकाग्रता हमारे मन की बस्तियों में समरूपता विजेता सरलता को एक रेखा में आने पर संभव हो पाता है गौतम बुद्ध इस पर बल देते हैं। और इसके द्वारा ही व्यक्ति द्वारा अपने परम लक्ष्य की प्राप्ति संभव है ऐसा उनका प्रबल मत है।

अवैचारिक से विचार शीलता के युग का आरंभ :

निवर्तमान प्रचलित अर्थहीन क्रिया-कांडों ने जब लोगों के भीतर सही विचार के द्वार बंद कर दिए थे तब भगवान बुद्ध ने जन-समाज को अपने मौलिक विचार की शक्ति से अवगत कराया। यहीं से एक नए युग का आरम्भ हुआ। चूँकि हर काल में हर मनुष्य की मूलभूत चाहत होती है 'दुःख से मुक्ति और सुख की प्राप्ति' और इसी इच्छा का दुरुपयोग कर के प्रचलित धर्मों द्वारा जन-समाज को गुमराह करके लूटा जा रहा था । ऐसे में भगवान बुद्ध ने चार आर्य सत्य की अत्यंत स्पष्ट व ज़ोरदार प्ररुपणा की। जन-जन के मानस में यह चार आर्य सत्य कुछ इस तरह से जगह बनाते गए कि लोगों में कल्पित क्रिया-कांड के शोषण का भय कम होने लगा और वास्तविकता का परिचय प्रगाढ़ होने लगा।[18]

यहीं से एक नए विचार-शील मानव का जन्म हुआ जो कार्य-कारण सिद्धांत के आधार पर विचार करता और उसी अनुरुप आचरण की प्रमुखता रखता था।

विश्लेषण:-आर्य सत्य की वैज्ञानिकता

बौद्ध धर्म के रुप में गौतम बुद्ध के शिक्षाओं के रुप में एक ऐसे धर्म-युग का आरम्भ हुआ जिसका दृष्टिकोण वैज्ञानिक था। जिस प्रकार विज्ञान का समग्र आधार है, युक्ति है , तर्क है और प्रमाण है , ठीक इसी प्रकार भगवान बुद्ध ने भी एक ऐसे धर्म की नींव रखी जिसको मात्र अंध विश्वास से मान लेने की आवश्यकता नहीं थी अपितु युक्ति और तर्क से जिसे प्रमाणित भी किया जा सकता था । जिस प्रकार विज्ञान अपने सिद्धांतों को प्रयोगशाला में प्रमाणित करने के पश्चात जन-सामान्य को मान्य हो जाते हैं उसी प्रकार भगवान बुद्ध ने स्वयं की आत्म-अनुभूति की प्रयोगशाला में इन सिद्धांतों को जाना-परखा और जन-सामान्य को मान्य हो सके , ऐसी भाषा में चार आर्य सत्य का निरुपण किया।[19]

"उस आत्मज्ञान के अभाव में समूचा वर्ग स्वयं भ्रमित था और दूसरों के भी भ्रमित कर रहा था। क्रिया कांडों से उसका शुभ आशय खो चूका था और अंधविश्वास के आधार पर यज्ञ, तर्पण आदि क्रियाओं के नाम पर हर किसी को लूटा जा रहा था ऐसे में भगवान बुद्ध ने धर्म के सनातन स्वरुप को पुनः उजागर किया और आर्य सत्य , अष्टांग मार्ग जैसी शिक्षाओं के माध्यम से जन सामान्य को खोखले आश्वासनों, भयों से आज़ाद किया।[20]

निष्कर्ष : जब सम्पूर्ण भारत में वैदिक काल चल रहा था और लोगों में क्रिया काण्ड का अत्यंत महत्व था, उसी काल में बौद्ध धर्म का आरम्भ हुआ। उस काल में समाज का वर्गीकरण जाति के आधार पर हो चुका था जिसका बाह्य रुप अपने निम्न स्तर पर आ चुका था। अल्पसंख्यक धर्मगुरु बहुसंख्यक शूद्र और वैश्य समाज पर प्राबल्य रखते थे। चूँकि यह वर्गीकरण जन्म के आधार पर हो रहा था, तो स्वाभाविक था कि यह जाति केवल जन्म से धर्मगुरु के रूप में स्थापित होती रही, ज्ञान और गुणों के आधार पर नहीं । धर्म के नाम पर अंधविश्वास, रुढ़िवाद और जड़ क्रिया-कांडों का समूचा प्रचार चल रहा था। जन समाज का सामूहिक शोषण उन लोगों में रोष को बढ़ा रहा था। कोई दूसरा विकल्प नहीं होने से परम्परा के ताने-बाने को तोड़ना भी सम्भव नहीं लग रहा था। उपदेशों में संतुलन की धारणा को महत्व दिया। इस बात पर बहुत बल दिया कि- भोग की अति से बचना जितना आवश्यक है उतना ही योग की अति अर्थात तपस्या की अति से भी बचना जरूरी है। भोग की अति से चेतना के चीथड़े होकर विवेक लुप्त और संस्कार सुप्त हो जाते हैं। गौतम बुद्ध द्वारा उपदेशित चार आर्य सत्यों के सारांश के रुप में, पहला दुःख है , दूसरा दुःख का कारण है, तीसरा दुःख का निदान है एवं चौथा वह मार्ग है जिससे दुःख का निदान होता है। गौतम बुद्ध के मत में अष्टांगिक मार्ग ही वह मध्यम मार्ग है जिससे दुःख का निदान होता है। अष्टांगिक मार्ग चूँकि ज्ञान, संकल्प, वचन, कर्मांत, आजीव, व्यायाम, स्मृति और समाधि के संदर्भ में सम्यकता से साक्षात्कार कराता है, अतः मध्यम मार्ग है।

संदर्भ ग्रंथ :

1. भारत में बौद्ध धर्म का इतिहास, लेखक तारा नाथ लामा,पटना, 1978 पृष्ठ-206.
2. बौद्ध संस्कृति, राहुल सांकृत्यायन, कोलकाता, 1952, पृष्ठ-7/ 17.
3. बुद्ध कालीन समाज एवं धर्म, डॉक्टर मदन मोहन सिंह, पटना, 1974, पृष्ठ-2/ 109.
4. बुद्धचर्या, राहुल सांकृत्यायन, प्रकाशन वर्ष - 2011, प्रकाशक- सम्यक प्रकाशन, दिल्ली, पृष्ठ-3 /27.
5. विनय-पिटक / अनुवादक,राहुल सांकृत्यायन ; संपादक, प्रियसेन सिंह, सम्यक प्रकाशन नई दिल्ली, प्रकाशन वर्ष- 2008 संस्करण , पृष्ठ-4/14.
6. बुद्धचर्या, राहुल सांकृत्यायन, प्रकाशन वर्ष - 2011, प्रकाशक- सम्यक प्रकाशन, दिल्ली, पृष्ठ-3 /27.
7. बुद्ध कालीन समाज एवं धर्म, डॉक्टर मदन मोहन सिंह, पटना, 1974, पृष्ठ-2/ 109.
8. भारतीय संस्कृति व उसका इतिहास, सत्यकेतु विद्यालंकार, पृष्ठ-6/31.
9. विनय-पिटक / अनुवादक,राहुल सांकृत्यायन ; संपादक, प्रियसेन सिंह, सम्यक प्रकाशन नई दिल्ली, प्रकाशन वर्ष- 2008 संस्करण, पृष्ठ-4/217.
10. बौद्ध संस्कृति का इतिहास, लेखक- भाग चंद्र जैन, प्रकाशक- आलोक प्रकाशन नागपुर, प्रकाशन वर्ष-1972, पृष्ठ-121.
11. मज्झिम निकाय, सुत्त पिटक, अनुवादक राहुल सांकृत्यायन, प्रकाशक- सम्यक प्रकाशन नई दिल्ली, प्रकाशन वर्ष- 2022, पृष्ठ-53.
12. भारत में बौद्ध धर्म का इतिहास, लेखक तारा नाथ लामा, प्रकाशक- काशी प्रसाद जायसवाल शोध संस्थान पटना, प्रकाशन वर्ष -1971, पृष्ठ-221.
13. बौद्ध संस्कृति, लेखक- राहुल सांकृत्यायन, प्रकाशक- महाबोधि सभा सारनाथ वाराणसी, प्रकाशन वर्ष- 1952, पृष्ठ-7/ 35.

14. बुद्ध कालीन समाज एवं धर्म, लेखक- डॉक्टर मदन मोहन सिंह, प्रकाशक- बिहार हिंदी ग्रंथ अकादमी, पटना, प्रकाशन वर्ष- 1974, पृष्ठ-2/ 157.
15. बुद्धचर्या, लेखक- राहुल सांकृत्यायन, प्रकाशक- महाबोधि सभा, सारनाथ वाराणसी, प्रकाशन वर्ष -1952 पृष्ठ-3 /68.
16. भारतीय संस्कृति व उसका इतिहास, लेखक- सत्यकेतु विद्यालंकार, प्रकाशक- सरस्वती सदन मसूरी, प्रकाशन वर्ष- 1968, पृष्ठ-6/71.
17. विनय पिटक / अनुवादक,राहुल सांकृत्यायन ; संपादक, प्रियसेन सिंह, सम्यक प्रकाशन नई दिल्ली, प्रकाशन वर्ष- 2008 संस्करण, पृष्ठ-4/14.
18. भारतीय संस्कृति व उसका इतिहास, सत्यकेतु विद्यालंकार, प्रकाशन वर्ष- 1968 प्रकाशक- सरस्वती सदन मसूरी, पृष्ठ-6/31.
19. बौद्ध संस्कृति का इतिहास, भाग चंद्र जैन, प्रकाशक- आलोक प्रकाशन, नागपुर प्रकाशन वर्ष- 1972, प्रथम संस्करण, पृष्ठ-221.
20. बौद्ध संस्कृति का इतिहास, भाग चंद्र जैन, प्रकाशक- आलोक प्रकाशन, नागपुर प्रकाशन वर्ष- 1972, प्रथम संस्करण, पृष्ठ-231.

•